सदुपदेश

(परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज द्वारा
विभिन्न अवसरों पर अभिव्यक्त उक्तियाँ)

श्री अखिल विनय

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगर-२४९१९२

जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण : २०१४
(२,००० प्रतियाँ)

द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

Swami Chidananda Birth Centenary Series—29

निःशुल्क वितरणार्थ

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगरह्वह्व२४९१९२,
जिला टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit : dlsbooks.org

सदुपदेश

गुरु : परब्रह्म की स्थूल मूर्ति

बालक श्रीधर राव को मंगलूर में अपने नाना के साथ एक आम सभा में गान्धी जी के निकट मंच पर बैठने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। बापू के विचारों ने उन्हें पीड़ितों और दलितों का सेवक बना दिया। और दिव्य प्रकाश मिलाह्लह्लप्रात:स्मरणीय स्वामी शिवानन्द जी के चरणों में बैठ कर, जिन्होंने स्वामी चिदानन्द नाम से अभिहित किया।

त्वं हि विष्णुर्विरंचिस्त्वं त्वंच देवो महेश्वर:।
त्वमेव शक्तिरूपोऽसि निर्गुणस्त्वं सनातनः।।

तुम्हीं विष्णु हो, तुम विरंचि हो, तुम्हीं महेश्वर हे गुरुदेव।
शक्ति-रूप हो, तुम निर्गुण हो और सनातन हो गुरुदेव।

दीक्षा-समय में गुरुदेव से प्राप्त गुरु-मन्त्र ही परम शब्द है : ''मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्।'' इन दिनों गुरु के सामान्य वचनों को सामान्य शब्द मान कर उन पर यथोचित मनोयोग न देने की भूल साधक-जगत् में बहुत अधिक प्रचलित हो चली है। किन्तु गुरु के बताये मार्ग पर चल कर ही हम आध्यात्मिक चेतनावस्था पूर्ण रूप से विकसित करके यह घोषित कर सकेंगे : ''मैं न तो मन हूँ और न शरीर ही। मैं अमर आत्मा हूँ।''

ना मैं मन हूँ, ना मैं तन हूँ, अमर आत्मा का हूँ रूप।
शुद्ध भी हूँ, बुद्ध भी हूँ मैं, और निरंजन का हूँ रूप।।

'युग-विभूतिह्लह्लस्वामी शिवानन्द' के लेखक श्री अखिल विनय की सन् १९८४ में प्रकाशित अन्य कृति 'जीवन-सन्तह्लह्लस्वामी चिदानन्द' में से संकलित

जग की माया पार कर चुका, देव नहीं ना जीव का रूप।
सबसे भिन्न ब्रह्म ही हूँ मैं, 'सत्-चित्-आनन्द' शुद्ध स्वरूप।।

स्वामी जी का कथन है, ''**सद्गुरु के व्यक्तित्व में परब्रह्म का दर्शन ही साधक की आध्यात्मिक खोज की सफलता का मूल आधार है।** इस प्रकार साधक-वर्ग ने जिस व्यक्ति-विशेष की शरण में जा कर, उसे अपने हृदय के अन्तरतम प्रकोष्ठ में अपने आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक के रूप में स्वीकार किया है, उसके लिए वही **सद्गुरु साक्षात् पराशक्ति का स्वरूप है।** वह ब्रह्मा है, वह विष्णु है, वह महेश्वर है, वह शक्ति है और वही स्वयं अक्षर परब्रह्म है। सभी साधक जिन श्लोकों का प्रतिदिन पाठ करते हैं, उनमें इस महा गुह्य रहस्य तथा परम सत्य का निर्देश किया गया है।''

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।

गुरु ब्रह्मा है, गुरु विष्णु है और महेश्वर है गुरुदेव।
अतः दण्डवत् गुरुदेव को परब्रह्म साक्षात् गुरुदेव।।
गुरुमूर्ति ध्यान मूल है गुरुपद हैं पूजा के मूल।
मन्त्र-मूल सम गुरु-वाक्य हैं गुरु-कृपा है मोक्ष का मूल।

साधक की दृष्टि के समक्ष गुरु का मानव-स्वरूप नहीं, वरन् उसके स्थान में परब्रह्म का तेजोमय साकार स्वरूप उपस्थित होना चाहिए। समग्र विश्व के साधकों तथा जिज्ञासुओं, चाहे वे पूर्व के हों अथवा पश्चिम के, से मेरी यह विनम्र सूचना तथा विनती है। चाहे व्यक्ति किसी का भी अनुयायी हो, परन्तु एक बार अपने अन्तःकरण में किसी को सद्गुरु-रूप में स्वीकार करने के पश्चात् उसके प्रति कैसा भाव रखना चाहिए, इस विषय में मेरी यह

साधारण–सी सूचना है। गुरु का सत्य–स्वरूप क्या है? उनके किन स्वरूपों का हमें अनुभव करना चाहिए ? इस महान् रहस्य का परिचय हमें इस पवित्र स्तवन से मिलता है :

यस्यान्तर्नादिमध्यं न हि करचरणं नामगोत्रं न सूत्रं
नो जातिर्नैव वर्ण: न भवति पुरुषो नो नपुंसं न च स्त्री ।।
नाकारं नो विकारं न हि जनि मरणं नास्ति पुण्यं न पापम् ।
नो तत्त्वं तत्त्वमेकं सहजसमरसं सद्गुरुं तं नमामि ।।

नाम–गोत्र–कर–चरण सूत्र–नहिं आदि–मध्य जिसके अन्तर।
जाति–वर्ण नहिं पुरुष नपुंसक नहिं स्त्री का है अन्तर।।
कर्म विकार जन्म–मरण नहिं पुण्य–पाप से जो निर्लेप।
सहज समरस नम: सद्गुरु तत्त्व नहीं पर तत्त्व है एक।।

अतएव साधक की अभिवृत्ति, भक्तिभावपूर्ण होनी चाहिए तथा गुरु के उपदेशों को अतीव श्रद्धा तथा गम्भीर भाव से श्रवण तथा अनुशीलन करना चाहिए।

भारतीय संस्कृति

महामण्डलेश्वर स्वामी वेदव्यासानन्द सरस्वती (संस्थापक, गीता आश्रम, स्वर्गाश्रम) के शब्दों मेंह्नह्न''**स्वामी चिदानन्द जी महाराज यथा नाम तथा गुण हैं। चित्+आनन्द=चिदानन्द! चिदानन्द अव्यय, अनादि, चेतन, निर्विकार, अजर, अमर परमात्मा का नाम है।...सत् कहते हैं जो तीनों कालों में रहे, कभी नष्ट न हो, चित् कहते हैं जो चेतन हो, जड़ न हो, और आनन्द कहते हैं जो आनन्द–स्वरूप हो, जिसमें आनन्द ही आनन्द भरा हो।**''

''जब मैं दिसम्बर मास (१९७५) में विदेश–भ्रमण कर रहा था जहाँ स्वामी चिदानन्द जी भी उसी घर के उसी कमरे में एक बार ठहर चुके

थेह्नह्नमुझे बताया गया कि स्वामी जी उस घर में जितने दिन ठहरे, अपने सभी कार्य वे अपने हाथ से करना पसन्द करते थे। यहाँ तक कि उस कमरे की तथा अपने वस्त्रों की सफाई तक वे अपने हाथ से करने लग जाते थे। भारत से बीसियों सन्त अमेरिका आये, पर लोगों की श्रद्धा चिदानन्द जी के बराबर किसी में नहीं हुई। डा. मिश्रा (अमेरिका वाले) तथा भारत के मुनि सुशीलकुमार जी, दोनों ने मुझे अमेरिका में बताया कि उन्होंने जीवन में चिदानन्द जी जैसा सरल और निष्कपट सन्त दूसरा नहीं देखा।''

''अमृतसर के 'अखिल भारतीय गीता सम्मेलन' में स्वामी चिदानन्द जी ने न केवल भगवन्नाम-कीर्तन करके अपने अध्यक्षीय भाषण का लगभग आधा समय समाप्त कर दिया, अपितु इस कीर्तन को उन्होंने अपनी परा वाणी से भगवद्-भक्ति में भाव-विभोर हो कर इस प्रकार गा-गा कर सुनाया कि आधे से अधिक जनता की आँखों से अश्रुपात होने लगा। इतना ही नहीं, मंच पर बैठे हुए एक सौ से अधिक सन्त तथा महोपदेशकह्नह्नसभी भाव-विभोर हो गये।'' इसी बारे में श्री स्वामी श्यामसुन्दरदास शास्त्री, प्रबन्धक ट्रस्टी, श्री साधु गरीबदासीय धर्मशाला (सेवाश्रम) ट्रस्ट, हरिद्वार ने अपने विचार यों व्यक्त किये थेह्नह्न''प्रथम बार हम दोनों अमृतसर के 'गीता महासम्मेलन' में एक मंच पर मिले थे। जिस मधुर कण्ठ से आपने आत्म-विभोर हो कर कीर्तन किया, उसे सुन कर उपस्थित जन-समाज मन्त्रमुग्ध-सा रह गया। आपने अपने पदार्पण द्वारा उस भूमि को पावन कर दिया तथा 'रमता जोगी बहता पानी' सूक्ति को सार्थक किया।''

स्वामी चिदानन्द भारतीय संस्कृति के अपूर्व प्रतीक हैं। वे सन्तों से मिलने का कोई अवसर चूकते नहीं, फिर चाहे वे किसी भी धर्म, मत या सम्प्रदाय के हों, उनका मठ या आश्रम हो या न हो, शिष्यों की विशाल संख्या या अल्पता से उनका कोई सम्बन्ध नहीं रहताह्नह्नवे तो सन्त में प्रभु के दर्शन करते हैं, फिर चाहे वह गृहस्थी हो या संन्यासी, जंगल में हो या

सार्वजनिक स्थान में। पवनार में स्वामी जी ने जब आचार्य विनोबा जी के दर्शन किये, तो वे उसी प्रकार उनसे मिले जैसे किसी वरिष्ठ संन्यासी की अभ्यर्थना कर रहे हों। उत्कल प्रदेश की अपनी कई यात्राओं के दौरान स्वामी जी ने श्री श्री बया बाबा, नामाचार्य और रहस्यवादी योगी के बारे में सुना था, जो बारह से अधिक वर्षों से मौन-साधना में लगे हैं और जो भुवनेश्वर के 'कल्पतरु आश्रम' के संस्थापक बाबा जी श्री रामदास जी महाराज के उत्तराधिकारी हैं। स्वामी जी उनके दर्शन करना चाहते थे और उधर वे रामदास बाबा जी की जन्म-शताब्दी के लिए किसी पहुँचे हुए सन्त को आश्रम में लाना चाहते थे। यह सम्भवत: दैवी संयोग था कि महाबलीपुरम् से भुवनेश्वर पहुचने के बाद स्वामी चिदानन्द विमान-तल से सीधे कल्पतरु आश्रम में बाबा से मिलने चले ! दोनों सन्तों का बड़ी देर तक आध्यात्मिक मिलन हुआ। एक ने दूसरे को साष्टांग प्रणाम किया।

भारतीय संस्कृति के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए स्वामी जी ने १३ अक्तूबर १९७२ को अल्मोड़ा की एक आम-सभा में कहा था॥"...भारतीय संस्कृति का लक्ष्य बहुत महान् है। यह लक्ष्य है आत्म-साक्षात्कार के लिए जीवन में साधना करना, मानव-जीवन को भोग और भौतिकता की भूमिका से ऊपर उठाते हुए उसे ऊँचे लक्ष्यों तक पहुँचाना। पूरे मानव-इतिहास में हमारी संस्कृति का यह एक विशेष काम रहा है। मानव केवल एक स्थूल और बाह्य घटना नहीं है। जो बाह्य और दृश्यमान् है, उसके पीछे एक अव्यक्त और सूक्ष्म तत्त्व छिपा हुआ है। उसका दर्शन हमारे प्राचीन लोगों को हुआ था।"

"हर भारतीय के जीवन की यह लालसा रहती है कि कब वह दिन आयेगा जब वह उत्तराखण्ड के चारों धामों की यात्रा करेगा॥ कैलास-मानसरोवर की, गंगोत्तरी-यमुनोत्तरी की, बदरी-केदार की यात्रा करेगा। इतना ऊँचा भाव इस क्षेत्र के सम्बन्ध में हर नर-नारी के हृदय में

बसा है। हमारे शास्त्रों और पुराणों में भी इस देश की प्रशंसा की गयी है। आधुनिक युग में स्वामी विवेकानन्द ने भी इस क्षेत्र का गौरव बढ़ाया है। पाश्चात्य जगत् में वेदान्त का जय-घोष करके जब वे भारत लौटे, तो उन्होंने कोलम्बो से अल्मोड़ा[१] की यात्रा की। भारतवर्ष की शान, धर्म तथा दर्शन की उत्पत्ति का स्थान यह उत्तराखण्ड है। याज्ञवल्क्य, व्यास, शंकराचार्य जैसे सन्तों और ऋषियों ने यहाँ से ज्ञान की गंगा प्रवाहित की।''

स्वामी चिदानन्द जी ने आगे कहाह्वह्व''भारत की एकता के लिए ऊँच-नीच की भावना का मिटना आवश्यक है। हमें किसी के साथ भेदभाव नहीं बरतना चाहिए। जिस भगवान् पर आप जल चढ़ाते हैं, वह भगवान् सबमें विराजमान है। वेदों में भी यही लिखा है कि सब पर दया करो, सबसे प्रेम करो, सबमें एक ही तत्त्व देखो, आत्म-भाव से देखो। भगवान् राम ने भीलनी के जूठे बेर तक प्रेम से खाये, केवट को गले लगाया। इस तरह हम अपने जीवन में समत्व प्रकट करें, तो भारत की एकता सुरक्षित रहेगी और उस एकता में मंगलकारी शक्ति का निर्माण होगा। शिव-शक्ति का विकास होगा।...हमारे अन्त:करण में जो ऊँचे भाव तथा आदर्श हैं, उनको हमें तुरन्त कार्यान्वित करना चाहिए। डाक्टर एनी बेसेण्ट ने एक बार कहा था, 'भारत की जड़ें धर्म में हैं। भारत से धर्म को निकाल दें, तो भारत समाप्त हो जायेगा।' मेरी भगवान् से प्रार्थना है कि उत्तराखण्ड भारत की आध्यात्मिक राजधानी बने!''

अमृतस्य पुत्रा:

१९७२ में नवरात्रि के अवसर पर अपने एक प्रवचन में स्वामी जी ने कहा था कि भारतीय संस्कृति की आत्मा के रूप में अवस्थित ज्ञान के तीन

---

[१]स्वामी विवेकानन्द के प्रवचनों का संकलन है : From Colombo to Almora

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं : (१) **आप मरने वाले नाशवान् व्यक्ति नहीं हैं; आप तो अजर, अमर, अविनाशी हैं 'अमृतस्य पुत्राः' हैं।** (२) भगवद्-अनुभव, दिव्यता की अनुभूति ही मानव-जीवन का एकमात्र लक्ष्य है। (३) इस लक्ष्य को प्राप्त करने का मार्ग ही धर्म है।

स्वामी जी ने बतायाह्न ''हमारी संस्कृति का जो आदर्श है, उसका आपके जीवन में क्या स्थान होना चाहिए और हमारे जीवन-कार्यों में इन आदर्शों का क्या उपयोग है, इस विषय पर अपनी सेवा आपके चरणों में अर्पित करूँगा। भारत की पुण्यभूमि में पैदा हुई संस्कृति की अपनी एक विशेषता है, जो आप अन्य संस्कृतियों में नहीं पा सकते। हमारी संस्कृति की उत्पत्ति दिव्य ज्ञान से हुई है। इसलिए हमारे धर्म को वैदिक धर्म कहते हैं। वेद का अर्थ होता है ज्ञान। मानव और विश्व का क्या सम्बन्ध है? मानव और विश्व की उत्पत्ति कहाँ से हुई है? दृश्य जगत् और दृश्य मानव के पीछे कौन-सा तत्त्व छिपा हुआ है? इन प्रश्नों का उत्तर खोजते हुए जिस ज्ञान का विकास हुआ, वह हमारी संस्कृति की आधारशिला है।''

प्रार्थनामय जीवन

संसार में सुख-शान्ति बनाये रखने के लिए जीवन को धार्मिक बनाना अत्यन्त आवश्यक है; इसीलिए अर्थ और काम से धर्म को ऊँचा माना गया है। मनुष्य और पशु में क्या अन्तर इतना ही है कि मनुष्य में विवेक है, बुद्धि है, भले-बुरे की परख है। हमारे धर्म में मनुष्य के चार पुरुषार्थ बताये गये हैंह्न धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष। चौथा अर्थात् मोक्ष ही इन सभी में सबसे महत्त्वपूर्ण है। बीता हुआ समय कभी लौट कर नहीं आता। अत: हमारा हर क्षण ईश्वर के स्मरण में व्यतीत होना चाहिए, तभी हमारे जीवन की सार्थकता है।

स्वामी जी का कथन है : ''कोई भी विचार, जो मन में स्थायी हो जाता है, प्रबल होने लगता है और मन में स्वयं को दोहराने की प्रवृत्ति उत्पन्न करता है। आप कुछ भी चिन्तन करें, उसे पुन:-पुन: सोचना मन की स्वाभाविक प्रकृति है। मन में जो विचार जान-बूझ कर स्वीकृत हुआ है, वह तुरन्त ही अपनी पुनरावृत्ति चाहता है और जो-कुछ भी आप सोचते हैं, वह कर्म के रूप में व्यक्त हो जाता है। यदि आपमें दया-भाव उठता है, तो आप दया-भाव-युक्त कर्म करने के लिए प्रवृत्त होंगे। यदि आप विषयपरायण अथवा लोलुप विचारों में संलग्न हैं, तो हठात् ही कर्म भी आप ऐसा करेंगे जो विषयपरक अथवा लोलुप होगा। क्रोधित भाव आपको कठोर कृत्य करने को बाधित करता है और कामुक भाव ऐसा करने के लिए प्रेरित करता है, जिसमें राग की झलक हो। कोई भी विचार मनुष्य को अपने अनुरूप कार्य करने को प्रेरित करता है। यह दूसरी बात है, जिसे आपको समझना है।''

स्वामी जी ने १ नवम्बर १९७१ को टिहरी में अपने प्रवचन में कहा था''...जो कोई भी नहीं कर सकता है, वह राम-नाम कर सकता है, भगवन्नाम कर सकता है। वह तो अद्‌भुत, अवर्णनीय एक दिव्य शक्ति है। आप राम-नाम का अभ्यास कीजिए। भगवान् में अटल विश्वास रख कर इस कार्य में प्रवृत्त होइए और प्रात: तथा सायं वही कार्य करते रहें। थोड़ा-बहुत, दश-पन्दरह मिनट की मौन प्रार्थना। मौन हो कर, सीधा बैठ कर, उनके साथ वह तार जोड़ कर प्रभु से प्रेरणा और शक्ति पाने का अभ्यास करें। **मौन प्रार्थना, भगवन्नाम और अटल विश्वास के द्वारा आप शक्तिशाली बनें।**'' इसी प्रकार स्वामी जी ने १३ अक्तूबर १९७२ को कहा था :

''आपके जीवन में आपका भगवान् के साथ जो आध्यात्मिक सम्बन्ध है, उसे कभी भूलना नहीं चाहिए। आपको समझना चाहिए कि

आप एक अविनाशी सत्ता के अंश हैं। भगवान् के दिव्य स्वरूप में जो भी सद्गुण हमारी कल्पना में हैं, वे सब दिव्य गुण आपके अन्दर हैं।...बाह्य जगत् में आपका धन्धा भले ही कुछ हो, पर अन्दर के जगत् में आत्मा की जाग्रति ही आपका धन्धा है।

''**आप सबको प्रातः तथा सायंकाल आत्म-चिन्तन, आत्मा के विषय में ध्यान करना चाहिए।** प्रतिदिन प्रातःकाल उस दिव्य तत्त्व को नवीन रूप से जाग्रत करने का कार्य करना चाहिए। मानव की मलिनता में नहीं, वरंच उसमें छिपे दिव्य तत्त्व को प्राप्त करने में ही आपकी विशेषता है। झूठ, राग, द्वेष, स्वार्थह्वये सब पतन के मार्ग हैं। ये क्षुद्रता के लक्षण हैं। इन सबका परिणाम दुःख और पश्चात्ताप के अतिरिक्त और क्या हो सकता है?''

क्रोध पर विजय

यह सच है कि मनुष्य एक विवेकशील प्राणी है, वह विचार कर सकता है, अनुभव कर सकता है, अनुमान लगा सकता है, नवीन निर्णय ले सकता है। वह ज्ञान से युक्त है; किन्तु जब समय आता है तब मनुष्य कर्तव्याकर्तव्य को भूल कर, बुद्धि और तर्क को बिसार कर, किन्हीं विशेष परिस्थितियों में पड़ कर अपने को पशु के सदृश्य बना लेता है अर्थात् जब क्रोध अथवा ईर्ष्या का प्रचण्ड आक्रमण होता है, हम किसी पशु की भाँति बन जाते हैं। बहुत क्रोध आने पर मनुष्य किसी की हत्या भी कर सकता है, जो कि सामान्य मनःस्थिति में वह नहीं करेगा। कुछ समय पश्चात् वह स्वयं ही हैरान रह जाता है और सोचता है : 'क्या मैं यह कार्य कर सकता था?'

स्वामी चिदानन्द जी इसीलिए कहते हैंह्वह''साधक को साधना के प्रति सदा सजग तथा जाग्रत रहना चाहिए। तनिक-सी भूल साधक की

समस्त साधना, उसकी जीवन-भर की कमाई पल मात्र में समूल नष्ट कर सकती है।''

क्रोध पर विजय पाने के लिए क्षमा और शान्ति अपेक्षित हैं। इस सन्दर्भ में स्वामी जी के जीवन का एक प्रेरक प्रसंग लाभकारी सिद्ध होगा, जिसे सुश्री प्रकाश अग्रवाल ने प्रकट किया है :

गणेश-कुटीर के ऊपर नव-निर्मित हाल में प्रथम प्रवेश की पूजा सम्पन्न करने के उपरान्त स्वामी चिदानन्द जी महाराज भक्तों और श्रद्धालुओं से घिरे अतिथि-कक्ष के सामने वाली शिला-पीठिका पर बैठ गये। इतने में आश्रम के मन्दिर को जाने वाली सीढ़ियों के निकट ऋषिकेश से आ कर एक ताँगा रुका। हठात् ताँगे वाले की चिल्लाहट और अपशब्दों से उस ओर ध्यान गया।

कोलाहल श्री स्वामी जी के कर्ण-कुहरों में पड़ा और शान्त मुद्रा में ही स्थिति का अनुमान करते हुए उन्होंने ताँगे वाले की चीख-पुकार को अनसुना कर सीढ़ियों की ओर पग बढ़ाते युवक की अपेक्षा पहले ताँगे वाले को निकट आने का संकेत किया। क्रोध से अभिभूत ताँगे वाला उस शान्त, सहज और हार्दिकता की मूक अभिव्यंजना करने वाले दिव्य व्यक्तित्व के समक्ष जल-अभिसिंचित दूध के उबाल की तरह क्रमशः अनायास शान्त हो रहा था, परन्तु क्रोधाग्नि के स्फुलिंगों का आभास उसके श्वास-प्रश्वास दे रहे थे।

धीमे स्वर में स्वामी जी ने मात्र इतना पूछा, 'उन्होंने तुम्हें कितना दिया?' ताँगे वाला रोष की उसी भावना को पुनर्जीवित करता हुआ विस्तार से अपने पक्ष को न्यायोचित बताना चाहता था। स्वामी जी ने विस्तार में जाने से पूर्व ही उसके हाथ में एक रुपया थमा दिया। तत्काल ही अवशिष्ट

क्रोध की भावना भी विलीन हो गयी।...पूजा में प्राप्त प्रसाद उसके हाथ में दे कर, पुष्पहार उसके गले में डालते हुए कहाह्वह्व'अब जाओ, देखो गुस्सा नहीं होना चाहिए।'

अभ्यागत भी नीचे उतर आया और आते ही संकोच विजड़ित स्वर में स्पष्ट करना चाहा कि 'ताँगे वाले को उतना ही दिया गया, जितना उससे तय किया गया था।' स्वामी जी ने पूछा, 'कहाँ जा रहे थे? आश्रम? दर्शन करने?' जैसा सद्य: वह सब-कुछ कहीं अतीत बन गया हो। युवक ने स्वीकृति में शिर हिलाया। 'तो जाओ, दर्शन करो'ह्वह्वअपूर्व आत्मीयता का अविस्मरणीय स्वर!

इसी प्रकार देहरादून के ब्रिगेडियर लक्ष्मीनारायण सभरवाल ने अपने संस्मरण में स्पष्ट किया हैह्वह्व

''स्वामी जी की कृपा के पात्र केवल उनके शिष्य ही नहीं, अपितु सारी मानवता है। स्वामी जी एक बीमार शिष्या को देखने अस्पताल गये। वहाँ शिष्या के निकट वाले बिस्तर पर एक अन्य बीमार महिला थीं। स्वामी जी को देखते ही उसने कहा, 'बाबा! मुझसे तो भगवान् भी रूठ गया है...!' यह सुन कर स्वामी जी उसके पास गये और बोले, 'माता जी! जब एक बच्चा गन्दा हो जाता है, तो माँ क्या करती है?'और फिर उत्तर भी स्वयं ही दिया, 'माँ बच्चे को नहलाती-धुलाती है और गोद में ले लेती है। माँ बच्चे को फेंक तो नहीं देती? भगवान् तो उससे बहुत ऊँचे हैं।' उस बीमार महिला के पास बैठ कर स्वामी जी ने उसे सान्त्वना दी और अपने हाथ से सन्तरे छील कर उसे खिलाये। जब महिला का मन शान्त हुआ, तो स्वामी जी अपनी बीमार शिष्या से मिलने उसके पास चले गये।''

शिक्षा का लक्ष्य

एक समय था, जब देश–विदेश से लोग भारत में शिक्षा प्राप्त करने आया करते थे; परन्तु आज भारतवासी विदेश में शिक्षा प्राप्त करने में अपना गौरव समझते हैं।

स्वामी चिदानन्द जी ने वास्तविक शिक्षा उसे माना है, जो हमारे अन्दर दिव्यता जाग्रत करने का मार्ग बतलाये। उन्होंने ४ अक्तूबर १९७२ को टिहरी के एक कालेज में शिक्षकों एवं छात्रों के समक्ष कहा थाह्नह्न''कोई भी शिल्पकार जब इमारत बनाने की योजना बनाता है, तो निर्माण–कार्य प्रारम्भ होने से पूर्व भूमि खोद कर आधार–शिला रखता है। इमारत कितनी दृढ़ बनेगी, यह आधार (नींव) पर निर्भर है। विद्यार्थी–जीवन का पूरे जीवन के साथ वही सम्बन्ध है, जो नींव का मकान के साथ है।...इसके लिए सम्यक् ज्ञान की आवश्यकता है।

''आधुनिक शिक्षा से तो हममें विविध उद्योगों को करने की योग्यता आती है; परन्तु वास्तविक मानव बनने के लिए तो दूसरे ही प्रकार की शिक्षा आवश्यक है। वास्तविक शिक्षा केवल स्मृति को भरने की प्रक्रिया मात्र नहीं है। असली शिक्षा का काम तो मानव–स्वभाव में निहित गुणों को प्रकट करना है। शिक्षण की प्रक्रिया द्वारा गुणों को भीतर से बाहर प्रकट किया जाता है, बाहर से भीतर नहीं डाला जाता (Education is something inside out, not outside in)।''

पुरोला (उत्तरकाशी) के राजकीय इण्टर कालेज में ३० सितम्बर १९७२ को प्रवचन देते हुए स्वामी जी ने कहा थाह्नह्न''पाठ्यक्रम की पुस्तकों द्वारा जो विषय आपको पढ़ाये जाते हैं, उनसे जीवन की बुनियाद बनाने का ज्ञान नहीं प्राप्त होता। यह शिक्षा–प्रणाली अधूरी है। इस शिक्षा–प्रणाली द्वारा परीक्षा में पास होने पर नौकरी मिलने का साधन तो

हाथ लग जाता है; परन्तु उससे आप ऊँचे नहीं उठ सकते। यदि किसी व्यक्ति के पास आत्म-विकास की कला का ज्ञान नहीं है, तो जो-कुछ कमायेगा, उससे अपना ही शत्रु बन जायेगा।

''शिक्षण के साथ-साथ मनुष्य के व्यक्तित्व की भिन्न-भिन्न भूमिकाओं का विकास होना भी आवश्यक है। उसके हृदय की साधना होनी चाहिए, हृदय का विकास होना चाहिए, उसमें परोपकार की वृत्ति बढ़नी चाहिए। शारीरिक, मानसिक तथा संकल्प-शक्ति का विकास होना चाहिए। मनुष्य के व्यक्तित्व का पवित्रीकरण आवश्यक है। उसका रचनात्मक, सर्जनात्मक विकास होना चाहिए। इस तरह विद्यार्थी-जीवन केवल स्कूल की पढ़ाई और खेलकूद ही नहीं है, अपितु यह तो आने वाले जीवन की तैयारी है।''

गुरुदेव ने जीवन की व्याख्या इस प्रकार की है :

जीवन एक युद्ध है, इससे संघर्ष करो।
जीवन एक गीत है, इसे गाओ।
जीवन एक खेल है, इसे जीत लो।
जीवन एक यात्रा है, इसे पूरी कर लो।
जीवन एक स्वप्न है, इसकी अनुभूति करो।

Life is a battle, fight it.
Life is a song, sing it.
Life is a game, win it.
Life is a voyage, reach it.
Life is a dream, experience it.

श्री स्वामी चिदानन्द जी उनके शब्दों का अक्षरश: पालन कर रहे हैं। शिक्षा की उपर्युक्त व्याख्या स्वामी जी के जीवन में चरितार्थ हुई है। वे कितनी ही भाषाएँ जानते हैंह्लह्लहिन्दी, अँगरेजी, तमिल, तेलगु, कन्नड़,

मलयालम और गुजराती। ऋषिकेश में पहुँच कर उन्होंने 'गढ़वाली' बोलने का भी थोड़ा अभ्यास कर लिया। क्षेत्र के पहाड़ी जनों का दु:ख-दर्द उनकी भाषा में सुनते और 'हाँ-हाँ' करते-करते वह भाषा भी सीख गये। स्वामी जी आश्रम के सूत्रधार रहे; परन्तु रहे हमेशा 'बापू' की वेशभूषा मेंह्वह्वघुटनों तक धोती और ऊपर छोटा-सा वस्त्रह्वह्वकभी वह भी नहीं!

डा. रविशंकर शर्मा (वर्धा) ने लिखा हैह्वह्व''...लेकिन हमारा तो प्रत्यक्ष अनुभव स्वामी जी के साथ का तब आया, जब वे कुष्ठ-धाम, दत्तपुर में पधारे। यहाँ आने पर पूज्य विनोबा जी से भेंट करना उद्देश्य था। लेकिन बहुत दिनों से उनकी इच्छा थी कि कुष्ठ-रोगियों को पुरुषार्थी, स्वावलम्बी, मानवीय जीवन बिताने की कारगर योजना जहाँ की गयी हो, वैसा स्थान देखा जाये। हमारा सौभाग्य रहा कि स्वामी जी यहाँ दो दिन रह सके। कुष्ठ-रोगियों को उनके अमृत-वचन सुन कर बड़ी प्रेरणा मिली। स्वामी जी की नम्रता, सरलता, उनके आडम्बर रहित जीवन और प्रशान्त व्यक्तित्व की छाप ज्यों-की-त्यों आज भी ताजी है। पूज्य विनोबा जी के साथ के संवाद, कुष्ठ-धाम, दत्तपुर में उनके कीर्तन, प्रवचन, सेवाग्राम में बापू की कुटी में ध्यान और कस्तूरबा ट्रस्ट की सेविकाओं के बीच व्याख्यानह्वह्वये सब अविस्मरणीय हैं।''

आज के दिन

अपनी कृति 'मानवता से' ('ए मेसेज टू मैनकाइण्ड') में स्वामी जी कहते हैं कि **आज के दिन क्या करें? ''कलह को सद्भावना का रूप दीजिए। विस्मृत मित्र की खोज कीजिए। सन्देह को निकाल फेंकिए और विश्वास को प्रतिस्थापित कीजिए।** एक स्नेहपूर्ण पत्र लिखिए। सम्पत्ति के उपभोग में अन्यों को भी भागीदार बनाइए। मृदु उत्तर

दीजिए। युवा-वर्ग को प्रोत्साहित कीजिए। वाणी अथवा कृति द्वारा अपनी निष्ठा अभिव्यक्त कीजिए।

''प्रतिज्ञा-पालन कीजिए। समय निकालिए। शत्रु को क्षमा कीजिए। समझने का प्रयास कीजिए। ईर्ष्या की अवहेलना कीजिए। दूसरों से आप जो अपेक्षा रखते हैं, उसकी जाँच कीजिए। सर्वप्रथम दूसरों के विषय में सोचिए। दूसरों के गुणों का मूल्यांकन कीजिए। दयालु बनिए। सौम्य बनिए। थोड़ा अधिक हँसिए।

''विश्वासपात्र बनिए। आत्म-तुष्टि को निन्द्य मानिए। कृतज्ञता व्यक्त कीजिए। अपने इष्टदेव की आराधना कीजिए। बच्चे के हृदय को प्रफुल्ल बनाइए। अपना प्रेम प्रकट कीजिए। अपने प्रेम को पुन: अभिव्यक्त कीजिए।''

आध्यात्मिक उन्नति

सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमें दिन-प्रति-दिन उन्नति के पथ पर अग्रसर होना है। अत: वही परम शुभ दिन है और पवित्र अवसर है, जब हम अपने सब कर्मों को आध्यात्मिक बना कर सर्वरूपेण ध्यान की उपपत्ति और अभ्यास के लिए नियमित साधना प्रारम्भ करते हैं।

'शिवानन्द-आत्मकथा' में कहा गया है :

''...मन तथा हृदय की शुद्धि के लिए कर्मयोग आवश्यक है। सुन्दर स्वास्थ्य, शक्ति तथा प्राण की शुद्धि और मन की स्थिरता के लिए हठयोग की, संकल्पों के नाश तथा ध्यान में एकाग्रता लाने के लिए राजयोग की तथा अविद्या के आवरण को दूर करने तथा अन्तत: अपने सच्चिदानन्द-स्वरूप में निवास करने के लिए ज्ञानयोग की आवश्यकता है।''

“योग के ज्ञान के प्रचार के लिए
योग-समन्वय की शिक्षा देने के लिए
इस संकट-काल में जब भौतिकवाद का बोलबाला हो चला
ईश्वर की महिमा को पुनः प्रसारित करने के लिए
लोगों में भक्ति एवं श्रद्धा भरने के लिए
मानव-जाति के आध्यात्मिक उत्थान के लिए
हर घर में शान्ति एवं सुख लाने के लिए
मैंने दिव्य जीवन संघ की स्थापना की।
हिमालय के पवित्र मनहर प्रदेश में
ऋषिकेश के पवित्र गंगा के तट पर
योग-वेदान्त आरण्य अकादमी को चलाया।”

स्वामी शिवानन्द

गुरुदेव के उसी कार्य को आज आगे बढ़ा रहे हैं स्वामी चिदानन्द जी, जिनके लिए भूतपूर्व केन्द्रीय शिक्षामन्त्री और कानपुर विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति भक्तदर्शन जी ने ‘हीरक जयन्ती’ के अवसर पर लिखा थाह्नह्न“स्वामी चिदानन्द जी अपने गहन अध्ययन, अपनी सरलता तथा आध्यात्मिकता के लिए विख्यात हैं। प्रातःस्मरणीय स्वामी शिवानन्द जी के उत्तराधिकारी का कार्यभार वे बहुत योग्यता तथा सफलता के साथ सम्पन्न कर रहे हैं। आध्यात्मिक साधना में निमग्न रहते हुए भी उन्होंने अपने-आपको हिमालय की समस्याओं तथा आकांक्षाओं के साथ एकाकार कर दिया। इसीलिए उन्होंने व्यावहारिक वेदान्त के प्रणेता स्वामी रामतीर्थ जी के जन्म शताब्दी समारोह में सम्मिलित हो कर तथा उत्तराखण्ड के कर्मठ तथा लोकप्रिय सर्वोदयी जन-नेता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा की गतिविधियों में सहायता करके अपनी उदात्त भावना का परिचय दिया है।”

वर्तमान ही है वास्तविक यथार्थता

गुरुदेव शिवानन्द जी की निम्नांकित कविता इस बात की द्योतक है कि भूत की स्मृति तथा भविष्य की उधेड़बुन में हमारे दैनिक जीवन का अधिकांश भाग व्यर्थ ही बीत जाता है और हमें वर्तमान का भान नहीं रहताह्नह्न

आज 'कल' में बदल जाता है,
बीता हुआ कल आज की स्मृति है,
यह एकमात्र स्मृति ही है।
आने वाला कल आज का स्वप्न है,
यह केवल एक लालसा है।
पूर्णरूपेण केवल वर्तमान में रहो,
अतीत को भुला दो तथा आने वाले कल को भूलो।
परमेश्वर में न भूत है न भविष्य।
परमेश्वर प्रतीक है वर्तमान का,
वर्तमान ही है वास्तविक यथार्थता।

Today becomes yesterday,
Yesterday is today's memory,
It is a rememberance only.
Tomorrow is today's dream,
It is a longing only.
Live in the solid present alone,
Wipe off yesterday and forget tomorrow.
In god there is neither past nor future,
God is the symbol of the present,
Present only is the solid reality.

स्वामी चिदानन्द जी वर्तमान का सर्वोत्तम उपयोग करने के लिए आग्रह किया करते हैं। आग्रह ही नहीं, वे अपने विचारों को कार्यरूप में

परिणत करते हैं। यही कारण है कि स्वामी जी ने उत्तराखण्ड के मद्यनिषेध-आन्दोलन को अपना भक्तिमय, हार्दिक, सक्रिय आशीर्वाद देते हुए समस्त सेवा-कार्यों के लिए अपनी आध्यात्मिक गरिमा का स्पर्श किया। फलत: हिमालय की उपत्यकाएँ विगत चार दशकों से सत्य, प्रेम और करुणा पर आधारित सेवा-कार्यों का स्पर्श करती आ रही हैं। जिस प्रकार राष्ट्रपिता बापू ने सेवक और सेवा-साधनों को अपने जीवनादर्श से आध्यात्मिक क्रान्तिकारी स्परूप प्रदान किया, उसी प्रकार स्वामी चिदानन्द जी ने अपने जीवन-दर्शन से बताया कि आध्यात्मिक सरसता और समत्व से ही जीवन में कर्म के साथ प्रविष्ट होने वाली यान्त्रिकता को रोका जा सकता है।

यही कारण है कि स्वामी जी ने प्रत्यक्ष सेवा-कार्य में लगे सेवकों के निवेदन पर समय-समय पर हिमालय-क्षेत्र की घाटियों और चोटियों की यात्राएँ भी कीं। स्वामी जी की इक्कीस दिवसीय यात्रा को उत्तराखण्ड के निवासी और लोक-सेवक स्मृति तथा प्रेरणा के अंगरूप से सँजोये हुए हैं, तो स्वामी जी की ४ मार्च १९७५ से एक सप्ताह की जम्मू-कश्मीर प्रदेश की यात्रा ने कुष्ठ-रोगियों, वृद्धाश्रम के क्लान्त शरीरधारियों, विश्वविद्यालय के विद्वज्जनों और अन्य भक्तों तथा रचनात्मक कार्यकर्ताओं को नवीन संस्पर्श का आभास कराया। उन्हें स्वामी जी के हृदय से प्रस्फुटित भक्ति-कणों और सूक्ष्म, गहन व्यावहारिक वेदान्त की विचारणा का पान करने का अवसर मिला।

स्वामी जी ने चेतावनी दी है : ''जब कोई व्यक्ति अपनी सुनिश्चित धारणाओं पर दृढ़ बने रहने और उन्हें कार्यान्वित करने का प्रयास करता है, तब उसके साहस की परीक्षा लेने वाले सक्रिय विरोधों का उसे सदा ही

सामना करना होता है। आध्यात्मिक साधक के लिए सूक्ष्म निरीक्षण का गुण बहुत ही आवश्यक है; क्योंकि उसे जीवन की इस पाठशाला में बहुत से पाठ सीखने हैं, जहाँ अनुभव के द्वारा ही शिक्षा मिलती है।''

''निवृत्ति-मार्ग अपनाने वाले आधुनिक साधकों में से नब्बे प्रतिशत की नैराश्यपूर्ण असफलता का प्रमुख कारण उनका उत्साह रहित एवं अस्थिर त्याग ही है। वे अपने अतीत के मोह, स्मृति, अभिमान आदि के चिह्नों को सर्वथा मिटाते नहीं हैं और यही कारण है कि वर्षों तक संन्यास-जीवन व्यतीत करने के पश्चात् भी उनका त्याग आंशिक ही रहता है और अन्त में विषादपूर्ण और अकर्मण्य त्याग की स्थिति में ही उनका पर्यवसान होता है। उनका मन अनिश्चित आकांक्षाओं और व्यर्थ के खेद से संकुल रहता है। सच बात तो यह है कि आध्यात्मिक जीवन की साधना चिरन्तन है और आध्यात्मिक अनुभूति असीम।''

दैनिक प्रार्थना

कहत 'शिवानन्द',
हे प्रभु! हमें ले चल, असत् से सत् की ओर;
तमस् से ज्योति की ओर, मृत्यु से अमरत्व की ओर।
घृणा से प्रेम की ओर।
अपवित्रता से पवित्रता की ओर, ससीमता से असीमता की ओर।
हे प्रभु! हमें ले चल!
अज्ञान से ज्ञान की ओर, बन्धन से मोक्ष की ओर। ॐ तत्सत्!

* * *

एक चमत्कार

मेरे मित्र चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के विचार उन्हीं के शब्दों मेंह्न

स्वामी चिदानन्द जी सच्चे सन्त और उच्च कोटि के कर्मयोगी हैं। गुणों का ऐसा मेल अत्यन्त दुर्लभ होता है। ईश्वर-भक्ति, तप और सत्य-साधना प्रारम्भ ही से उनके जीवन का ध्येय रहे हैं; उनका हृदय करुणा से भरपूर है। दीन-दुःखियों और बीमारों की सेवा में उन्हें उतना ही आनन्द और सन्तोष प्राप्त होता है जितना अध्यात्म-साधना में। उनका कार्य-क्षेत्र केवल भारत ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व है।

मैं पहली बार मार्च १९२२ में ऋषिकेश गया था और रात लक्ष्मणझूला के निकट ठहरा था। उस समय मैं गुरुकुल कांगड़ी का एक छात्र था। गुरुकुल भी उन दिनों गंगातट पर ही अवस्थित था जहाँ भागीरथी शिवालिक की सुन्दर पहाड़ियों से विदा ले रही है।....मैं ऋषिकेश के असाधारण सौन्दर्य और शान्तिपूर्ण वातावरण से प्रभावित हो कर बीसों बार वहाँ जाता रहा। अनेक साधु-सन्तों से भेंट हुई। भिखारियों और कोढ़ियों की संख्या वहाँ निरन्तर और तेजी से बढ़ती जा रही थी।....

क्रमशः यह स्थिति आ गयी कि मैंने ऋषिकेश जाना बहुत कम कर दिया। वहाँ जा कर मानसिक क्लेश पहुँचता था। बाजार से ले कर लक्ष्मणझूला तक सैकड़ों कोढ़ी अपने हाथ बढ़ा-बढ़ा कर भीख माँगने लगे थे। वे अपने जख्मी हाथ इतना नजदीक ले आते थे कि वीभत्स दृश्य बन जाता था।

एक लम्बे अन्तराल के बाद १९५२-५३ में मैं दिल्ली से कार द्वारा ऋषिकेश गया। मेरे एक मित्र भी सपरिवार मेरे साथ थे। वे सब पहली बार ऋषिकेश जा रहे थे। मैंने उन्हें आगाह कर दिया था कि ऋषिकेश से लक्ष्मणझूला पहुँचने तक बड़ी संख्या में कोढ़ी हमसे भीख माँगेंगे; पर वे

रोगी हैंह्वह्वयह सोच कर आप उन्हें डाँटें नहीं। चुपचाप सह लें। पर मेरे आश्चर्य का कोई पारावार नहीं रहा, जब मैंने पाया कि राह-भर में एक भी कोढ़ी हम लोगों के पास नहीं आया। चुंगी आदि कितने ही कारणों से कार हमें बार-बार रोकनी पड़ती थी; पर कहीं कोई कोढ़ी दिखायी नहीं दिया।

यथासमय हमने मुनिकीरेती के पास कार रोकी और वहाँ से पैदल लक्ष्मणझूला की ओर चले। वहाँ भी किसी ने हमें परेशान नहीं किया। मैं सोच रहा था कि आखिर सैकड़ों कोढ़ी चले कहाँ गये? पर थोड़ी ही देर में राज खुल गया। दूर ही से दिखायी दिया कि पगडण्डी के दोनों ओर दो लम्बी कतारों में बहुत से व्यक्ति चुपचाप बैठे हैं। सबके सामने एक-एक बरतन भी था। पास पहुँच कर पाया कि वे सब कोढ़ी थे। किसी तरह की कोई अव्यवस्था या शोर-शराबा वहाँ नहीं था। मित्र-परिवार द्वारा दान में जो भी जिसे दिया गया, वह मुस्करा कर उसे ले लेता था, अधिक देने के लिए वह आग्रह या अनुरोध नहीं करता था।

मेरे लिए यह सचमुच एक चमत्कार था। मैं सोच रहा था कि यह अत्यन्त शुभ चमत्कार हो कैसे गया? मालूम हुआ कि यह सब बीमार भाई जो कुछ धन, वस्त्र और खाद्य-पदार्थ प्राप्त करते हैं, सब-का-सब एकत्रित कर लिया जाता है और सबको बराबर-बराबर बाँट दिया जाता हैह्वह्वउन बीमारों को भी जो कमजोरी या अस्वास्थ्य के कारण यहाँ नहीं आ पाये हैं। मैंने यह भी देखा कि उनके कपड़े साफ हैं। उनके चेहरों पर वह निराशा, वह उत्साहहीनता भी नहीं है जो स्पष्ट रूप से यहाँ दिखायी दिया करती थी। बीमारों की एक पूरी जमात को जैसे नया जीवन मिल गया था।

पता चला कि शिवानन्द आश्रम में कुछ समय से एक साधक आया है और **यह विस्मयकारी वास्तविक चमत्कार उसी साधक ने किया है। इस साधक सन्त का नाम है स्वामी चिदानन्द।**

एक स्थान पर एकत्र, मृत्यु की ओर बढ़ते हुए सैकड़ों निराश बीमारों को उत्साह और आशापूर्ण मानवोंक्की जमात बना देना मेरी निगाह में वास्तविक चमत्कार है। चमत्कार का वास्तविक क्षेत्र तो मानव-हृदयों का परिवर्तन है, उन्हें 'प्रेय' से 'श्रेय' की ओर ले जाना है, निराशा से आशा की ओर ले जाना है। हमारा देश भारत आज व्यापक रूप से अन्धविश्वासों का विस्तृत क्षेत्र बना हुआ है। देवी-देवताओं, धर्मों और सम्प्रदायों के नाम पर भारत में भी और भारत के बाहर भी भारतीय जनसाधारण से करोड़ों रुपया एकत्रित किया जा रहा है। स्वामी चिदानन्द जी के गुरु स्वामी शिवानन्द जी ने इस स्थिति का बहुत ही अच्छा चित्रण अपने लेखों में किया है।

भारत को अध्यात्म विरासत में मिला है। आज संसार के बहुत से बुद्धिजीवी अध्यात्म की ओर आकृष्ट हो रहे हैं। यह आवश्यक है कि इस स्थिति को मानव मात्र के लिए कल्याणकारी बनाने का गम्भीर प्रयत्न योजनाबद्ध रूप से किया जाये। स्वामी चिदानन्द जी जैसे सन्त इस क्षेत्र में सही मार्ग-दर्शक सिद्ध हो सकते हैं।